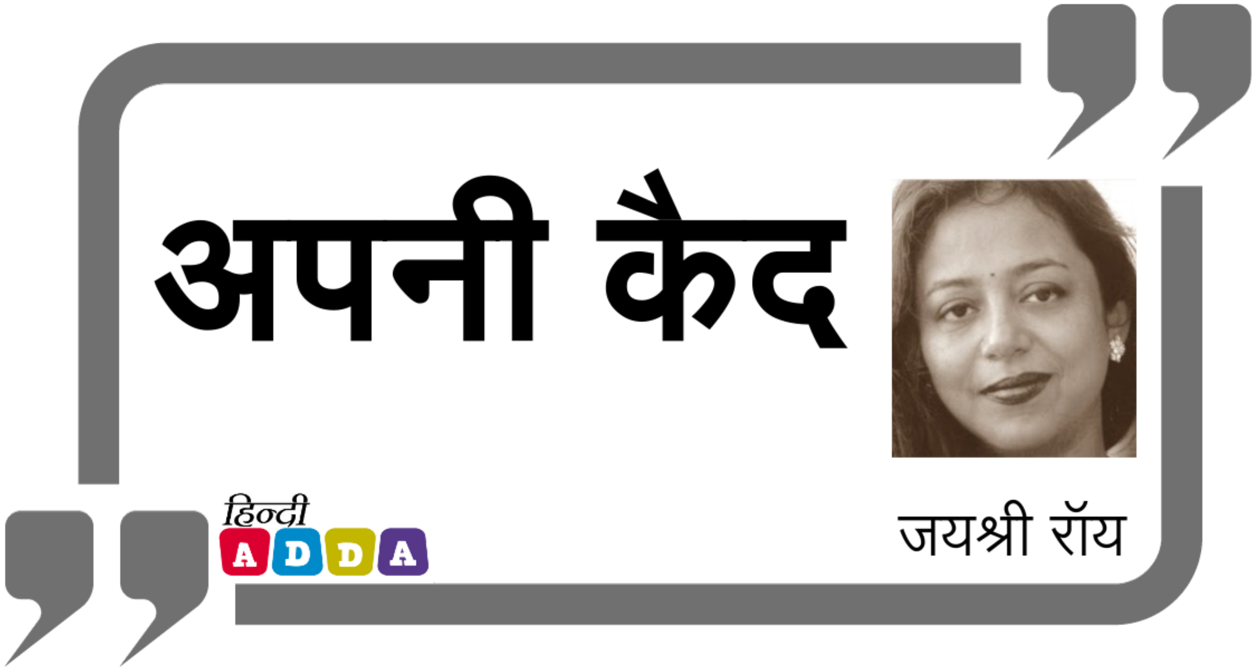

अपनी कैद

किचन का पिछला दरवाजा खुलते ही हवा में ब्रोकोली सूप की सोंधी गंध फैल गई थी और इसके साथ ही जो चेहरा चमका था, मैंने उसे उसी गंध के घेरे में पहचान लिया

https://www.hindiadda.com/apani-kaid/

था। यह माँ की जाति की महिला है! इसकी देह से लालित्य नहीं, स्नेह रिसता है। एक बच्चा जो अपनी माँ की मौत के बाद अरसे से अपने भीतर दुबका पड़ा था, यकायक धूप की सुनहरी हरारत से भरकर बाहर निकल आया था - पंखुरी-पंखुरी खिलते सूरजमुखी की तरह - उतना ही ताजा और चमकीला।

मेरे पूरे वजूद से हल्की मुस्कराहट उसकी मटमैली नीली आँखों में तत्क्षण प्रतिबिंबित हुई थी - उसने मुझे पहचान लिया था, और उसकी अदृश्य बाँहें संपूर्ण अपनत्व के साथ मेरे इर्द-गिर्द घिर आई थीं।

वह छोटा-सा क्षण किसी जादू की तरह था। एक नन्हीं सी परिधि में मेरा गत-आगत अनायास सिमट आया था, ममता की गोद में सुरक्षित बच्चे की तरह। राहत की उस गहरी अनुभूति में होते ही मुझे खयाल आया था, कितना थका हुआ हूँ मैं... महीनों की जगार, दुख में घुली शून्यता और बरसे न बरसे आँसू मुझे एकदम से घेर लेते हैं।

मैंने उससे लकड़ी काटने का बिजली से चलने वाला औजार उधार माँगा था और उसने दिया भी था, मगर उससे पहले अपनी किचन में बुलाकर बैठाया था।

वह हमारी नई पड़ोसन थी। पिछले हफ्ते ही वे लोग इस किराये के मकान में रहने के लिए आए थे। लोग इस मकान को भुतहा कहते थे। दो साल पहले यहाँ एक विधवा ने आत्महत्या की थी। उसके बाद यहाँ कोई किरायेदार नहीं आया था। पर जैसा कि अक्सर होता है, उस खाली मकान में भी एक अदद भूत रहने लगा था। मगर आज यहाँ किसी भूत की बासी बोसीदा गंध नहीं, गर्म खून, इंसानों की महक थी और जिंदगी की भी।

मैं रोज सोचता रहा कि आकर इनसे मिलूँ, मगर हो न सका। माँ की मृत्यु के बाद विगत एक वर्ष से मैं बिल्कुल असामाजिक होकर जी रहा हूँ। माँ दुनिया और मेरे बीच एक कड़ी थीं। जो था उनसे था। अब जब वे नहीं रहीं तो कुछ भी नहीं।

आज अपने बगीचे के जंगलात साफ करने गया तो याद आया हमारा शॉ मशीन महीनों से खराब पड़ा था। वही माँगने के लिए आज सुबह के समय यहाँ अपने नए पड़ोसी के घर चला आया था।

वह घर में अकेली थी शायद। छोटे से किचन टेबल पर बैठकर मैं खिड़की पर उड़ती धूप की तितलियों की ओर देखता रहा था। लेस के पर्दों के पीछे दिसंबर का गहरा नीला

आकाश ठिठुरा-सा प्रतीत हो रहा था। हवा में पाइन की ताजी गंध थी - एक ताजा और कच्चे रेशम-सा उजला, चमकीला दिन।

इस घर में जिंदगी है - हर तरफ - पारे की छोटी-छोटी चमकदार बूँदों की तरह - स्टोव पर उबलते सूप की देगची में, मेज पर पसरी गर्म धूप के टुकड़े ने, उसकी कलाई में कभी-कभार बज उठती चूड़ियों की ठुनक में गुनगुनाती थियराती।। मैंने एक गहरी साँस ली थी, दोनों फेफड़ों में भरकर - आह...! सुकून... घर... औरत... माँ!

वह सामने बैठकर जिंजर केक का एक टुकड़ा काटती है, मेरे छोटे-से चौकोर प्लेट में परोसती है - 'आज ही बेक किया है... आर्ची - मेरे बेटे को पसंद है! स्कूल से आते ही देखना टूट पड़ेगा...'

केक के हल्के गर्म टुकड़े में चम्मच चलाते हुए मैं उसकी फीकी, हड़ियल उँगलियाँ देखता हूँ। उँगली में घिसकर बेजान पड़ गई शादी की अँगूठी दुबली उँगली में ढीली होकर निरंतर घूम रही है। छँटे हुए रंगहीन नाखून के नीचे की त्वचा हल्की पीली है।

क्या कुछ कहती रही थी वह - हल्के बजते जलतरंग की तरह उसकी आवाज, मीठी और ठुनक भरी। मेरी कॉफी में क्रीम डालकर वह शुगर क्यूब के टुकड़े उठाते-उठाते ठहर गई थी। मैंने मना कर दिया था - 'नहीं मैं नहीं लेता। वैसे मैं क्रीम और दूध भी नहीं लेता कॉफी में।।'

'बहुत अच्छा करते हैं। मैं भी परहेज करती हूँ, मधुमेह है।'

लकड़ी की बोर्ड पर सब्जियाँ काटते हुए उसकी रीढ़ की हड्डियाँ गाउन के ऊपर चमकने लगी थीं। वह मेरी माँ की तरह ही दुबली थी। वैसा ही पानी में घिस गए चिकने पत्थर-सा चेहरा और उस पर उभरी गाल की हड्डियाँ - हमेशा खुबानी की तरह दहके हुए, जैसे ज्वर में हो।

उस दिन उसके घर से बहुत भारी और बहुत हल्का होकर लौटा था। लगा था जो खो गया था वह वापस मिल गया है। यह मिलना एक दूसरी तरह का अभाव मेरे भीतर पैदा कर गया था। अपना सूना घर और सूना लगा था। अनायास सब कुछ खो देने की प्रतीति मुझे अवसन्न कर गई थी। लगा था मेरे घर की जिंदगी मेरे पड़ोस में चली गई है। मेरी माँ... शैरोन... दो गड्डमड्ड चेहरे जल में हिलते सेवार की तरह धीरे-धीरे मेरे अंतस में डूब गए थे। उस दिन घर लौटकर मैंने देर तक पानी नहीं पीया था। मैं अपने मुँह में उस जिंजर केक के स्वाद को बचाए रखना चाहता था।

माँ के बाद हमारी रसोई का पारंपरिक तंदूर और सूप बनाने की काँसे की भारी पेंदी वाली केतली ठंडी पड़ी थी। कमरे की अँगीठी का भी यही हाल था। मैं सर्दी की ठिठुरती रातें स्टोव के किनारे कंपारी पीते हुए ऊँघ और नींद के बीच बिता देता था। अपने बिस्तर में नहीं लेटता था। वहाँ माँ की लोरियाँ, स्नेह भरी थपकियाँ स्मृतियों में कौंधकर मुझे सोने नहीं देती थीं। क्यों खुशी की यादें एक दिन अंततः दुख बन जाती हैं। क्यों सुखद अतीत पीड़ा का उत्स बनकर हर बार घर लौटता है...! मेरे भीतर छाई धुंध में रह-रह कर ये प्रश्न चमकते हैं और मैं और-और दिशाहारा हो उठता हूँ। पहले माँ थीं तो दुनिया थी, अब जो वे नहीं तो बस वे ही हैं, दुनिया नहीं।

आज एक अरसे बाद शैरोन को देखकर दुनिया की याद हो आई थी। माँ की स्मृतियों से परे होकर, जो रहकर भी कहीं नहीं रह गई थी। स्थूल होना, स्पर्श में होना ही हमेशा होना नहीं होता।

बचपन में पोलियो से मेरा दायाँ पैर कमजोर पड़ गया था। माँ कहती थीं किसी ट्रॉपिकल देश में हम क्रिसमस का अवकाश मनाने गए थे। वहीं यह रोग लगा होगा। मुझे भी उसकी धुँधली-सी याद थी। जब मैं रुक-रुक कर हिचकोले खाता हुआ-सा चलता, माँ मेरी तरफ देखने से बचतीं। क्या होता था उनकी आँखों में उस समय मेरे लिए, मैं सोच नहीं पाता था और जो महसूस करता था, उन भावों को व्यंजित करने के लिए शब्द नहीं मिलते थे। मुझे बस गिरजाघर के प्रार्थना कक्ष की दीवार पर बनी वह तस्वीर याद आती थी जिसमें सलीब पर लटके यीशु के जिस्म की ओर मरियम देख रही है। उनके दोनों हाथ सीने पर हैं और आँखें... हाँ! वही आँखें - मेरी माँ की आँखें... उनमें शब्द, ध्वनि से परे की वही मूक भाषा... हर माँ की आँखें एक जैसी होती हैं - मरियम जैसी! दुनिया भर के वात्सल्य, करुणा को इकट्ठा कर उसका स्थूल अनुवाद माँ के रूप में ही होता है।

मुझे स्कूल में बच्चे डोनाल्ड डक कहकर चिढ़ाते थे। मैं खेलना चाहता था, मगर बच्चे मुझे अपने साथ नहीं लेते थे। कभी लिया भी तो अड़ंगा लगाकर फेंक दिया। सबकी तरफ हिचकोले लेकर दौड़ता हुआ मैं किसी बिफरे बत्तख की तरह दिखता होऊँगा। बच्चे तालियाँ बजाते, मेरे सर पर इधर-उधर से चपत लगाते और मैं आँखों में आँसू भरे उनके पीछे जिद से भरा दौड़ता-भागता रहता।

एक बार इसी तरह बच्चों से पिटकर मैं खेल के मैदान में खड़ा था। स्कूल के गेट के पास जाने की हिम्मत नहीं हो रही थी। मेरा यूनिफॉर्म फट चुका था और चेहरा धूल से

सना हुआ था। घुटनों पर खून के धब्बे थे। गेट के पास मुझे न पाकर माँ ढूँढ़ते हुए वहाँ आई थीं। उनके पास आते ही मैं फट पड़ा था और उन्हें दोनों हाथों से पीटने लगा था।

माँ ने कुछ नहीं कहा था। मुझे अपने सीने में समेटे चुपचाप बैठी रही थीं। मैं उन्हें पीटते-पीटते आखिर थक गया था और एक समय के बाद निढाल होकर उनकी गोद में ढह गया था। माँ ने तब भी कुछ नहीं कहा था। मुझे याद है, उस दिन मेरी पीठ पर उनकी हथेलियाँ कबूतर के सीने की तरह नर्म और हरारत भरी थी। बाद में कहा था उन्होंने, जब भी तुम्हें कोई दुख दे, इसी तरह लाकर मुझ पर उड़ेल देना बीली। सुनकर मैं और रोया था।

बचपन से लेकर जब तक माँ रहीं, मैंने यही किया - दुनिया भर के दुख, संत्रास - जहाँ जो मिला, लाकर उन पर उड़ेलता रहा। बदले में वह मुझे खुशियों की गुलाबी कैंडियाँ थमाती रही। कभी कुछ भूल जाता तो माँ ही याद दिला कर मुझसे वसूल ले जातीं, बाकायादा तलाशी लेकर। कितनी सूक्ष्म थी उनकी दृष्टि - छोटा से छोटा दुख, बात भी उनसे नहीं छिपती - आँखों में टँका दुख का कोई मटमैला पैबंद, हँसी का कहीं से फीका हो गया रंग, चेहरे पर ठिठका हुआ एक जर्द मौन...

मुझे अपने कैशोर्य का चेहरा याद आता है - शीशे पर दहकता हुआ लाल-लाल, गुस्सैल मुहाँसों से भरा। कहीं से पीप, कहीं से खून, ओह! कितना गंदा दिखता था मैं खुद को ही। अपना चेहरा छिपाने के लिए संदूक, अलमारी ढूँढ़ता था। आवाज भी फटकर एकदम कर्कश और बेसुरी। न बच्चा, ना जवान, बीच की कोई चीज... बेढंगी, बदसूरत...

सोचते हुए मैं अपनी खाली बोतल टटोलता हूँ, वह दूर कोने में लुढ़की पड़ी है। आँखों के आगे गुलाबी तितलियाँ उड़ रही हैं, गले की एक नस धड़क रही है रह-रह कर। पूरे कमरे में अंधकार पसरा है, उल्टी पड़ी दवात की तरह... मैं सोफे पर लेटा-लेटा देख सकता हूँ मेरी खिड़की के ठीक सामने रोशनी से भरी शैरोन की खिड़की, उस पर नाचतीं खुशरंग परछाइयाँ, हँसी के खनखनाते टुकड़े, खाने की सुगंध... अरसे बाद मुझे भूख लग आई है। खयाल आ रहा है, मैं बहुत भूखा हूँ बहुत दिनों से! मुझे थैंक्स गीविंग पार्टियाँ याद आ रही हैं... तंदूरी टर्की, गर्म मक्खन आलू, लेटस, चीज और चेरी टमाटर का सलाद... मेरे मुँह में पानी भर आया है और आँखों में भी।

ऐसी ही एक पार्टी में मैंने लीजा के सामने प्रेम प्रस्ताव रखा था। लीजा - संदली त्वचा और अखरोट की रंगत जैसे बालोंवाली दुबली पतली लड़की... जो लहराकर चलती थी तो उसके सीने में भँवर से पड़ जाते थे। उसके पके जंगली बेरी जैसे लाल होंठों को

सोचकर सर्दी की रातों में मै झुलसा करता था। जिंदगी की पहली कविता भी मैंने उन्हीं होठों पर लिखी थी। रविवार की सुबह की प्रार्थना के लिए चर्च जाती हुई वह अपने लाल सुनहरे फ्रॉक में दहकते चिनार की तरह दिखती थी। कौंध और लहक से भरी। मैंने उसे एक बार एक जख्मी कबूतर की टाँग में पट्टी करते हुए देखा था। ना जाने क्यों उस समय वह मुझे मेरी माँ जैसी लगी थी - स्नेह, ममता से भरी हुई। बहुत कोमल, निर्मल...

थैंक्स गिविंग की उस रात मैंने लीजा को प्रोपोज किया - धड़कते दिल और पसीने से भीगे माथे के साथ। सीने में धड़कनों का शोर बढ़ रहा था, जैसे पसलियों पर दिल टूटा पड़ रहा हो।

मगर, सुनते ही लीजा की फिरोजी नील आँखों में व्यंग्य कटार की तरह कौंधा था। कैसी हिकारत भरी आँखों से घूरा था उसने मुझे। ओह! सोचता हूँ तो आज भी रगों में दौड़ता खून पानी बन जाता है। वाइन की लाली उसके होठों पर थी, ठीक जैसे अनार का रस फल के दरारों से टपकता है। वह नशे में थी उस समय, दिख रहा था। अपनी ऊँची सैंडिल उतारकर पंजों के बल लॉन की घास पर चल रही थी - ठीक किसी नृत्यरत राजहंसिनी की तरह। मैं उसकी सुर्ख एड़ियाँ देख रहा था जब उसने कहा था - तुम मुझे ठीकठाक लगते हो, बस तुम्हारी नाक... थोड़ी ज्यादा मोटी है, बट ए नोज वर्क कैन बी डन... एंड दैट शुड टेक केयर ऑफ द प्रॉब्लेम। और ये जो तुम्हारी चाल है... खैर...! बट तुम्हारी माँ इज द रीयल प्राब्लेम! यू आर अ ममाज ब्वाय। वी ऑल नो दैट... कभी उनको छोड़कर जी पाओगे... सोच लो, हम दोनों के बीच मुझे कोई तीसरा नहीं चाहिए...

अपने सीने की जकड़न को महसूसता हुआ मैं वहाँ खड़ा था - बुझते हुए अलाव के पास। आग की सुनहरी लपटें देर हुई सुर्ख टुकड़ों में तब्दील हो गई थीं। माथे पर मैपल बृक्ष के कासनी पत्ते हजारों जुगनू की तरह झिलमिला रहे थे। हवा चलती तो लगता तेज बौछार के साथ पानी बरसने लगा है। लीजा की आँखों में धधकती वितृष्णा मुझे नील कर गई थी। मैं सोचना चाहता था, मगर शून्य होकर रह गया था। माँ शब्द का उच्चारण उसने जिस हिकारत के साथ किया था, मेरे भीतर जहाँ जो कुछ भी अच्छा और कोमल था उसके लिए एकदम से मर गया था - ठीक जैसे कोई प्रांजल नदी यकायक रेत की ढूहों में तब्दील हो जाय।

मेरे जीवन में किसी औरत के प्रति आकर्षण का वह आखिरी दिन था। बहुत त्रासद भी। रात भर रोया था माँ की गोद में छिपकर। उनका एप्रन भीग गया था पूरी तरह।

थपकती रही थी वे मुझे बिना एक शब्द कहे। बहुत देर बाद एक ही बात कही थी - ये सब बड़ा होने का ही हिस्सा है बीली… एक दिन तो यह सब होना ही है… सुनकर मै बिफरा था - तो फिर मुझे कभी बड़ा ही नहीं होना है… इसके बाद अपनी जिंदगी की डिक्शनरी से मैंने लड़की शब्द को हमेशा के लिए मिटा दिया था। औरत का अर्थ मेरी माँ है - मेरी माँ जैसी होना है। जो उनकी तरह नहीं वह औरत नहीं। और उनकी जैसी कोई नहीं, कोई भी तो नहीं।

मैं किचन में स्टोव के किनारे ही सारी रात सोया रह गया था। सुबह नींद खुली तो दिसंबर की नर्म खुशनुमा धूप ने स्वागत किया। छत की मुँडेर पर बुलबुल का जोड़ा चहक रहा था। हवा में पाइन की गंध आज भी तेज थी।

आज शुक्रवार था, कचड़े की गाड़ी कचड़े की थैलियाँ इकट्ठा करने आनेवाली थी। कचड़े की थैली कचड़ा पेटी में डालते हुए मैंने शैरोन को देखा था उसके किचन गार्डेन में। धूप का शामियाना लगा कर बैठी थी। उसकी पीठ मेरी तरफ थी, छाँव से बाहर, धूप से भरी हुई।

मैं जानता था, सुबह का यही समय शैरोन का निहायत अपना होता है। पति और बच्चों के जाने के बाद वह एक कप काली कॉफी और सिगरेट लेकर थोड़ी देर के लिए अपने किचन गार्डेन में बैठती है। बिल्कुल शांत और निश्चिंत, धीरे-धीरे कॉफी की घूँट लेती हुई और सिगरेट पीती हुई। एक पूरे दिन की भाग-दौड़ और मेहनत की तैयारी में।

उसे इस तरह से बैठी हुई देखना मुझे गहरे सुकून से भर देता है। मैं मन ही मन इस प्रार्थना में होता हूँ कि यह शांति और फुर्सत के दुर्लभ क्षण उसके जीवन में बने रहें। माँ भी इसी तरह रोज बैठती थीं, मगर रातों को। सारे काम निबटा कर वह ड्रिंक का ग्लास और सिगरेट लेकर अपने बेडरूम में बैठती थीं, अपने सिरहाने वाली खिड़की खोलकर, हर मौसम में। चाहे बर्फ झड़ रही हो या बासंती हवा चल रही हो। वे गर्म करके लाल वाइन पीती थीं। माँ को उन क्षणों में देखना एक सुखद अनुभूति हुआ करता था। सिगरेट की कश लगाती हुई वे कितनी समर्थ, कितनी शक्तिसंपन्न लगती थीं… सारे दिन सख्त जूड़े में बँधे उनके गहरे नश्वार रंग के बाल उस समय उनके कंधों पर अलस बिखरे रहते। मैं अक्सर माँ के खूबसूरत पैर अपनी गोद में लेकर बिस्तर के पायताने बैठा रहता था। मगर माँ मुझे देखकर भी नहीं देखती थीं। उनका ध्यान न जाने कहाँ होता था। ऐसे समय में उनकी आँखों में अजीब-सी चमक और खोयापन होता था।

सर्दी की रातें खिड़की के नीचे खिलनेवाले जंगली गुलाबों की खुशबू से तर होती थीं। कुहासे में लिपटा चाँद बगीचे के छोटे से तालाब की सतह पर चमकता रहता। घर के

पिछवाड़े ओक के बूढ़े, घने पेड़ की डाल पर उल्लू बोलता तो मैं सिहर-सिहर जाता। मगर माँ का ध्यान नहीं टूटता।

पापा का चेहरा मुझे याद नहीं। माँ कहती थीं, मैं ही तुम्हारा माँ-बाप - जो भी कहो, हूँ बीली! मुझे भी ऐसा ही लगता था। माँ के रहते मुझे किसी और रिश्ते की कमी महसूस नहीं हुई। हर संबंध की पूरक थीं वे, हर रिश्ते का मुकम्मल चेहरा!

दिसंबर की हवा में जादू होता है। नीले आकाश में मंत्र-सा गुंजारता कुछ, जमीन, हरियाली पर पवित्र जल का-सा स्वर्गिक छिड़काव। प्रभु यिशु के आगमन का शुभ संदेश आकाश - बताश में। सब धुल-पुँछ कर साफ, स्वच्छ।

ईस्टर के अंडों पर रंग भरती माँ कहा करती थीं, ये अंडे जीवन और सृजन के प्रतीक हैं। हालोवीन के त्योहार में कोंहड़े पर चाकू से नाक मुँह के चित्र उकेरते भी उनकी कहानियाँ जारी रहती थीं। कितना कुछ बनाती थीं माँ क्रिसमस में। तरह-तरह के पारंपरिक केक, मिठाइयाँ। पूरे घर में रोशनी, रंगीन झालरें, दरवाजे पर झाऊ के पत्तों और सूखे फूलों का गोलाकार सजावट। ड्राइंग रूम में क्रिसमस का ताजा नन्हा पेड़! साथ ही घर-घर में कैरोल के गीत, काँच की खिड़कियों पर रंग बिरंगी चित्रकारी, बाजार के नाकों, दुकानों के सामने बारहसींगे पर उपहारों का थैला लेकर सवार बहुत बूढ़ा सैंटा क्लॉज... और क्रिसमस की सुबह अँगीठी के पास लटके मोजों में भरे उपहार... उन्हें खोलकर देखने की उत्तेजना में मैं रात भर सो नहीं पाता था। हमारे घर के बरामदे में नन्हें यीशु का क्रिव सजता था।

फिर वे सांध्य प्रार्थनाएँ, गिरजे के घंटे की गंभीर ध्वनि, कॉयरस में प्रभु की महिमा के गीत गाते सैकड़ों सम्मिलित कंठ और गिरजे की ऊँची मीनारों में ध्वनित-प्रतिध्वनित उनकी आवाज...

आज भी क्रिसमस है और सुबह से चर्च की घंटियाँ रह-रह कर बज रही हैं। शैरोन की रसोई की खिड़की भी सुबह से लजीज पकवानों की खूश्बू से महक रही है। शैरोन के तीन बच्चे हैं। दो भूरी आँखोंवाले शैतान बेटे और एक मक्खन के बट्टे पर उकेरे गए चित्र की तरह बेटी, गुड़िया जैसी। उसका पति किसी सुपर मार्केट में ट्रक ड्राइवर है। मोटे पेट और चुँधी आँखोंवाला - निहायत कुरूप और स्वभाव से अशिष्ट। चर्बी से ठसाठस भरा चेहरा, गला, गर्दन एक हुआ, माथे का सामने का हिस्सा उजड़कर एकदम नंगा मैदान... वह मुँह खोलकर चप-चप खाता है और बार-बार बिना माफी माँगे डकारें लेता है। उसे सबके सामने अपनी गुद्दी खुजाने की भी बुरी आदत है। ऐसा

करते हुए वह बेहद अश्लील प्रतीत होता है। हँसता है तो छोटी-छोटी आँखें मुँदकर पूरा चेहरा बंद गोभी-सा दिखता है।

उस दिन मैंने उसे देखा था गली के नुक्कड़ पर शराब पीकर बार के काउंटर पर बैठी औरत से बदतमीजी करते हुए। बाद में वहाँ बैठे दो अन्य लोगों ने उसे उठाकर बाहर गली में फेंक दिया था। वहाँ धूल में लोटते हुए वह कोई गीत गा रहा था। उस दिन मैं उसे उसके घर पहुँचा आया था। अपने पति को कंधे से पकड़कर सँभालते हुए शैरोन ने जाने मुझे किस दृष्टि से देखा था। उसमे कृतज्ञता थी या गहरा संकोच... उसकी लज्जा के क्षणों में मैने उसे अकेली छोड़ देना ही उचित समझा था।

उस रात शैरोन की खिड़की स्याह, बदसूरत परछाइयों से घिर गई थी। काँच के बरतनों के टूटने की आवाज। उसके पति के चीखने चिल्लाने की आवाजों के साथ शैरोन की दबी-दबी सिसकियाँ और मिन्नतें... सुनते हुए न जाने मैं कैसी यातना में हो आया था। अपनी माँ की तस्वीर के सामने अपनी मुट्ठियाँ भींचे बैठा रहा था। माँ कहती थीं जब भी गुस्सा आए या भावनाएँ निरंकुश होने लगे, गहरी-गहरी साँसें लेना। खून में कार्बन की मात्रा घटकर ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ती है और रक्तचाप सम पर आ जाता है। जिस ट्रॉपिकल देश से मुझे पोलियो की बीमारी मिली थी, वही से माँ योग का यह चमत्कार सीख आई थीं।

एक समय के बाद शैरोन की हिचकियाँ बंद हो गई थीं, मगर तब तक मेरे हाथ में थमी वाइन की नाजुक गिलसिया टूटकर रेजा-रेजा हो चुकी थी और उसके चमकीले टुकड़ों में मेरी हथेली के जख्म से टपके खून का रंग जामुनी पड़ गया था।

सोपां कहते हैं संगीत और अनुभूति का कोई सिद्धांत नहीं होता! मेरी अनुभूतियाँ भी सारे सिद्धांतों से परे अराजक हुई जा रही थीं। एक नियम का टूटना ही दूसरे नियम को जन्म देता है। मैं भी न जाने क्या तोड़कर क्या गढ़ना चाहता था। उस रात मैं सो नहीं पाया था।

रात के नीले आँचल में कुहासा कपास की ढेर की तरह सिमट आया था। धुएँ में डूबी गलियाँ सड़कों के किनारे जलते लैंप की पीली रोशनी में एकदम गुम और सुनसान। कैसी उदासी में लिथड़ी रात थी... मकानों के सघन छज्जों के बीच फँसा एक टुकड़ा आकाश कटी पतंग की तरह काँप रहा था। ऊपर खुरदरे कंबल से काले आकाश में जर्द तारे पैबंद की तरह टँके थे। जैसे पत्थर के टुकड़े हों।

वीलो के जाफरानी पत्तों के नीचे उस रात हवा और परछाइयाँ बेचैन लोटती रही थीं। दूर ओक के ऊँचे, प्राचीन पेड़ पर कोई रेवन रह-रह कर बोलता रहा था। उल्लू की आँखों की तरह वह रात अनझिप बीती थी। सुबह होते-होते मेरी आँखों के पपोटों पर जैसे काँच की महीन किर्चें बिछ गई थीं। उस सुबह कॉफी की प्याली के पीछे शैरोन की दो आर्द्र आँखें दर्द के पिघले दरिया सी फैली थी। उतनी ही बोझिल, उतनी ही गहरी, भरी-भरी... मैंने नर्गिस का पीला गुच्छा उसके सामने की मेज पर रखा था। उन फूलों को देखकर उस दिन बहुत-बहुत रोई थी वह। कॉफी की गंध और अखबार के पन्नों की ताजी महक से तर वह पारे-सी चमकीली सुबह उस दिन हम दोनों को एक अनाम संबंध में बाँध गई थी। एक कच्चा धागा, जितना कमजोर, उतना ही मजबूत!

इसके बाद हम दोनों अपने-अपने घर में एक दूसरे के साथ जीते रहे थे। एक मौन संवाद हम दोनों के बीच बना रहता। वह कुछ नहीं कहती, और मैं सब सुनता। मैं बोलता और वह उनमें मेरी अनकही ढूँढ़ लेती। उसकी आँखों की तरलता और गीली चमक में मेरे लिए मूक स्वीकार होता। खास मौकों पर उसके घर से आए पकवानो में उसकी कृतज्ञता व्यक्त होती रहती। मैं कुकीज के खस्ता टुकड़ों से आती दालचीनी की गंध में उसकी खुशी महसूसता और एक अनाम स्वाद में डूब जाता। उसके लिए छोटे-छोटे काम करते हुए मुझे जैसे कोई बड़ा ईनाम मिल जाता था - उसके बच्चों के साथ छुट्टी के दिनों में मछली पकड़ने जाते हुए, उसके शराबी पति को किसी गली नुक्कड़ से उठा कर लाते हुए, उसकी लॉन की घास साफ करते हुए...

इन सारे कामों का पुरस्कार वे दो आँखें थीं जिनकी दृष्टि में मेरी माँ की स्मृति समाई हुई थी। मैं उसके लिए हर वह काम करने की कोशिश करता जो मैं अपनी माँ के लिए नहीं कर पाया था। माँ कहती थी - बीली तब बड़ा होगा जब मैं मर जाऊँगी... अब जब मैं बड़ा हो गया हूँ, मैं चाहता हूँ माँ फिर से न मर जाए।

अब मैं बहुत शराब नहीं पीता, सुबह उठ जाता हूँ, नहाता हूँ, दाढ़ी बनाता हूँ, साफ-सुथरे कपड़े पहनता हूँ और इस प्रतीक्षा में बैठ जाता हूँ कि शैरोन के किसी काम आ सकूँ और मेरा दिन बन जाए। शहर में हमारी एक दुकान है, उसके किराये से मेरा गुजारा हो जाता है। माँ के बाद दुबारा काम में लौटने की मनःस्थिति में अभी तक नहीं हो पाया था।

इस बरस का पतझड़ भी अजीब था। एक साथ इतने सारे रंग... जैसे वन प्रांतर में रंगों की पिचकारियाँ छूट रही हों। धूसर होती धूप में किसी गीली पेंटिंग की तरह फागुन के दिन देर तक चमकते।

मैं शैरोन और उसके बच्चों तथा उनके झबड़ैले कुत्ते के साथ शाम को जंगलों में दूर-दूर तक निकल जाता था। शुगर मेपल के पत्ते इन पच्चीस दिनों तक पीले, नारंगी, लाल रंगों में नहा जाते। पहाड़ी झरने के आसपास फैले ऐश के पेड़ पीले के साथ गाढ़े बैंजनी में डूबे होते। हाई वे के किनारे का सघन वन - कितने तरह के पेड़ वहाँ - एल्म, बीच, बर्च, पॉपुलर, सिल्वर मेपल, वीलो, माउंटेन ऐश और स्ट्राइप्ड मेपल - बासंती, जाफरानी पत्तों से लदे खुश्क हवा में टूट पड़ने की तैयारी में। एक आत्महंता उत्सव... ख़त्म होने का, क्षरने का, एकदम से शेष हो जाने का भी शायद एक अपना ही आनंद होता है। मृत्यु के स्वागत में जीवन की ऐसी उछाह, बाँध टूटी उमंग... अपने होने का एक सर्वथा अलग अर्थ, स्वाद, न होने में सब कुछ है... साइंस और अध्यात्म - दोनों यही कहता है। अणु का महत्व तो हम देख ही चुके हैं - निर्माण में में भी और विनाश में भी...

रेड मेपल और स्कार्लेट ओक की डालों पर अंगार से दहकते पत्ते, जैसे आग लगी हो। गहरे पतझड़ में सुर्ख, सुनहरी आँच में तब्दील होने से पहले पेड़ों के अनोखे रंग - दूर-दूर तक जहाँ तक नजर जाए - बासंती, नारंगी, बैंजनी, जामुनी, केसरी, बादामी, सिंदूरी... रंगों के दंगे में छिपी फगुनाहट का खुनक भरा आभास... मौसम का यूँ हर रोज कपड़े बदलना - गरम रंगों से ठंडे और फिर जर्द रंगों तक का एक उत्सव भरा सफर!

रंगों की होली में शैरोन का मिजाज भी बदल जाता था। वह एकदम से बच्ची हो जाती थी। दौड़ती, हँसती, किलकती... तितली की चंचल झुंड की तरह माँ और बच्चे यहाँ-वहाँ उड़ते फिरते। ब्लैक ओक के बादामी, नारंगी, लाल धूप-छाँही तल में दिन के डूबते आखिरी उजाले में शैरोन का वह रूप मुझसे नहीं भूलता - चेहरे पर घुला केसर और आँखों में चमकती पारे-सी खुशी की अनगिन बूँदें... तितली के परों को छूने से जैसे अँगुली के पोर रँग जाते हैं, मौसम की मेहँदी शैरोन पर भी गहरे चढ़ी था। बुझने से पहले के मोम की तरह वह तेज शिखा में एकदम से जल उठी थी। उसका दिपता रूप मुझे खुशी के साथ कही एक अनाम डर से भी भर गया था। उसका बुझना मेरा अंधकर होगा, असीम अंधकार!

ऐश के बैंजनी पीले पत्तों की कालीन पर बैठकर वह कागज के प्यालों में थरमस से कॉफी उड़ेलती थी। शाम की हवा उसकी गंध मे भीगकर तर हो जाती थी। साथ ही मेरा मन भी। शुगर मेपल का इंद्रधनुष क्षितिज पर छाया रहता... एक देहातीत स्वप्न में जीवन के कठोर यथार्थ डूबकर स्वप्नमय प्रतीत होते। लगता अगर ये सब झूठ है तो इसी झूठ में जीवन गुजर जाए। प्रकृति के इस रंग भरे उत्सव में इस बरस हम सब भूल

कर शरीक हो गए थे। इन सब में मेरा एक मात्र पावना शैरोन की खुशी थी। वह मुस्कराती और मैं जिंदगी से भर जाता।

इधर शैरोन के पति माइक की शराब की लत बढ़ती ही जा रही थी। उसके साथ ही शैरोन पर उसके अत्याचार भी। वह दिनों तक काम पर नहीं जाता, जिस-तिस के साथ झगड़ा करता, गालियाँ बकता।। आखिर एक दिन उसे काम से निकाल दिया गया। मैं देख रहा था, शैरोन के घर अब दूध, अंडे, ब्रेड और दूसरे सामानों की गाड़ियाँ नहीं रुकतीं। उसके किचन की खिड़की से लजीज पकवानों की खुश्बूदार लपटें नहीं उठतीं, उसके लॉन की घास बेतरतीब और ऊसर होती जा रही थी।

शैरोन जंगली बेरियों के जैम बनाती, पड़ोसियों के बागानों से कच्चे-पक्के सेब चुन लाती, खुरदरे अनाजों की पोरीज, दलिया बनाकर अपने बच्चों को मान मनुहार से खिलाने का प्रयत्न करती।

मैं कभी अपना फ्रीज खराब होने या तबीयत ठीक न होने के बहाने बनाकर उसके दरवाजे पर दूध, फल, ब्रेड, मक्खन की टोकरी रख आता। ऐसे मौकों पर न वह मेरी तरफ देखती न मैं उसकी तरफ। मैं उसकी लज्जा और स्वाभिमान को बहुत एहतियात से ढके रहता, बदले में उसकी आँखें कृतज्ञता में छलछलाती रहतीं। वह माँ थी, इसलिए बहुत विवश थी। ममता के आगे स्वाभिमान को भी अक्सर हार जाना पड़ता है।

शैरोन ने बताया था वह अनाथ है। एक अनाथ आश्रम में उसकी परवरिश हुई थी। उसे नहीं पता था। संबंधों का स्वाद कैसा होता है, ममता का माधुर्य कैसा होता है। इतनी बड़ी दुनिया में उसका कोई नहीं, यह ख्याल उसे दहशत से भर देता था। उदास और निस्संग जीवन के लंबे सफर में अगर उसने अपने भगवान से हर रोज कुछ माँगा था तो वह था एक परिवार का सुख! उसे दौलत, शोहरत की भूख नहीं थी, बस संबंध की चाह थी। कोई उसका हो, वह किसी की हो। प्यार दे सके वह खुद को उड़ेल कर, किसी से स्नेह पाए चुटकी भर।

माइक से उसका परिचय उन्हीं दिनों हुआ था। उसके स्कूल के सामने माइक कैंडी और हवाई मिठाई का छोटा सा केऑक्स चलाता था। एकाध मुफ्त की कैंडी, दो-चार मीठे बोल और प्रेम, अपनेपन के लिए जन्म से भूखी शैरोन उसकी हो ली थी। थोड़े ही दिनों में ऊपर का आवरण हटाकर माइक का कुरूप चेहरा बाहर निकल आया था। जिसे वह प्रेम समझती थी, वह रेगिस्तान में जल के भ्रम के सिवा और कुछ न था। मगर एक

जहाज के पंछी की तरह हर रिश्ते से महरूम शैरोन उड़ना चाहकर भी बार-बार अपने नर्क में लौटने के लिए बाध्य और अभिशप्त थी।

अचानक मैं बहुत जिम्मेदार हो उठा था। अरसे बाद सिगरेट शराब छोड़कर काम की तलाश में निकल पड़ा था। मुझे लगने लगा था, शैरोन को मेरी जरूरत है। मैं उसकी किस तरह से मदद कर सकता था मैं नहीं जानता था। मगर मुझे तैयार रहना था - शैरोन के लिए, उसके बच्चों के लिए। न जाने कब, न जाने कैसे वह क्षण आ जाए। थोड़े दिनों की कोशिश के बाद एक सूअर के फार्म में मुझे नौकरी मिल गई थी। सूअरों की देखभाल करना मेरी ड्यूटी थी। मैंने यह काम सहर्ष स्वीकार लिया था, हालाँकि मुझे सूअरों की चिंयार से सख्त नफरत थी।

...और फिर अचानक एक दिन वह हादसा घटा था। माइक बहुत शराब पीकर शाम को घर लौटा था और शैरोन को बुरी तरह पीटा था। शैरोन के एक कंधे की हड्डी उतर गई थी और पूरा जिस्म बेल्ट के प्रहार के लाल-नीले धब्बों से भर गया था।

उसे पीटते-पीटते माइक खुद बेदम होकर गिर पड़ा था और उसे खून की उल्टियाँ आनी शुरू हो गई थीं। उसका लीवर फट गया था। शराब की वजह से उसे शिरोसिस था।

शाम को काम से लौटते हुए मैं शैरोन के परिवार के लिए सूअर का ताजा मांस और खुबानी का टोकरा ले आया था। उन्हें पहुँचाने शैरोन के घर गया तो वहाँ दोनों को फर्श पर अचेत पाया। बच्चे ट्यूशन से तब तक लौटे नहीं थे।

वह रात बहुत भारी थी हम सब पर। अस्पताल में डाक्टरों ने बता दिया था माइक के बचने की कोई उम्मीद नहीं। उसका लिवर पूरी तरह से नष्ट हो चुका था। अब बस कुछ ही समय की बात थी।

बच्चे घर में अकेले थे अतः शैरोन को घर लौटना पड़ा था। वैसे भी उसकी हालत वैसी नहीं थी कि वह अस्पताल में रुक सके। उसे उसके घर पहुँचाने मैं साथ गया था। उस दिन शाम से बारिश हो रही थी। पूरा आकाश स्लेटी चट्टान में तब्दील हो गया था। गीली सर्द हवा में घास और काई की गंध भरी थी। साँवले दिन पर शाम का नील बहुत जल्दी उतर आया था। एक हाड़-मज्जे तक उतरकर शून्य करता अवसाद भरा दिन...

शैरोन के तीनों बच्चे एक दूसरे से लिपटे अपने कमरे में पड़े थे - डरे हुए पपीज की तरह। शायद सो गए थे। शैरोन ड्राइंग रूम के काउच पर निढाल पड़ी थी। अँगीठी की बुझती-बुझती आग में उसका चेहरा राख की ढेर-सा लग रहा था। बस दो आँखें थीं जो

जिंदा थीं, दर्द से लिथड़ी हुई। रो-रो कर उसने अपना हाल बुरा कर लिया था। बहुत मुश्किल से मैंने उसे थोड़ा बंद गोभी का ठंडा सूप पिलाया था। जख्मी होठों से वह कुछ भी गर्म या तीखा खा नहीं पा रही थी।

मैं घर जाने के लिए उसके सिरहाने से उठने लगा तो उसने मेरा हाथ पीछे से पकड़ लिया था। उफ कितना ठंडा था उसका हाथ, पानी जैसा! मैंने उसे मुड़कर देखा था। क्या था उस रात शैरोन की आँखों में! कुछ ऐसा जो मैंने पहले कभी नहीं देखा था... एक तरल ऊष्मा, अनुनय, वर्ज्य की ग्लानि... मेरा दिल एकदम से बैठ गया था। तुम्हें इन सब से ऊपर होना है शैरोन! यह तुम्हारा मुकाम नहीं... गलतियाँ हम इनसान करते हैं, भगवान नहीं!

'तुम बिना माँगे मुझे बहुत कुछ देते आए हो, और मैं लेती भी रही हूँ... मगर आज मुझे मेरे मन की एक चीज दे दो... ये रात... दे दो...' कहते हुए शैरोन के गीले चेहरे पर उसकी आँखें बही जा रही थीं। वह गल रही थी सर से पाँव तक गर्म मोम की तरह। इतनी दयनीय, इतनी करुण, इतनी वल्नरेबल वह पहले कभी नहीं लगी थी मुझे। मेरे अंदर एक साथ न जाने क्या-क्या झनाके से टूटा था। मैं एक ही पल में जैसे किर्चों में तब्दील हो गया था। इस दुर्दांत समय की चपेट में वह किस तरह आ गई थी... मूरत थी, मिट्टी बन गई थी... किसी परदेश में बचपन में देखा एक दृश्य याद आया था - पानी में गलती देव मूर्तियाँ... कीचड़ में तब्दील होती आस्थाएँ, भगवान! भीतर कुछ असहनीय-सा घटा था। लगा था कोशिकाओं, शिराओं और रक्त के संजाल में दर्द की नीली नदी अनायास बह आई है... पहली बार उसने मुझसे कुछ माँगा था और मेरे पास देने के लिए कुछ नहीं था - वह सब जो वह माँग रही थी!

माँ ने कहा था, जिस ट्रॉपिकल देश में हम बहुत पहले घूमने गए थे, वहाँ लोग मंदिरों में जूते उतार कर जाते हैं। मैं भी अपना जिस्म उतार कर अब तक उसके पास आता रहा था - निरावरण, विशुद्ध मन हो कर... वह मेरा मंदिर थी, भगवान थी! अपने देवता से अर्पण नहीं लिया जाता, मैं सिर्फ अर्पित हो सकता था, वह भी जमीन पर गिरे फूल की तरह नहीं, पवित्र निर्मल सुगंध की तरह... और यह सुगंध मेरा प्यार है। मैं देहातीत होकर उस तक पहुँचा था, मगर मेरी भगवान अशरीरी नहीं, एक मानवी थी, धड़कती हुई, साँस लेती हुई... प्रेम देकर सोच लिया था, सब दे दिया है। मगर अब लग रहा है, यह देना ही तो शायद सब देना नहीं है... मै होम हो गया, मगर पूजा पूरी नहीं हुई... अनुष्ठान पूरा नहीं हुआ... मेरे भीतर की नर्म प्रार्थनाएँ काँटों में तब्दील हो गई थीं। सूनी हथेलियों में बस उसाँसें थीं, कुछ अंतिम साँसें...

शैरोन का हाथ छुड़ाकर मैं अपने घर लौट आया था। कितना कठिन था उससे इस तरह हाथ छुड़ाना... जैसे जिंदगी से बिलग रहा हूँ... घर आकर देर तक पीता रहा था। मगर, एक बार भी अपनी माँ की तस्वीर की तरफ देख नहीं पाया था। शैरोन को कुछ न दे पाने का दुख और अपने भीतर की सबसे खूबसूरत चीज को बचा ले जाने के सुख में टूट-टूट कर रोता रहा था।

जब वहाँ भी रहना कठिन हो गया तो उठकर अपने गॉड फादर के घर चला गया। माँ के बाद यही मेरा एकमात्र आश्रय था। नब्बे साल का मेरा गॉड फादर जॉन आँखों से प्रायः अंधा और अपाहिज था, मगर उसकी हथेलियों में मेरे लिए थोड़ी छाँव और स्नेह की ऊष्मा अब भी शेष थी...। कभी-कभी जब अकेलापन बर्दास्त से बाहर हो जाता था, मैं यही, उनके पास चला आता था।

अपने गॉड फादर के घर सुबह से पहले जब तंद्रालस पड़ा था मुझे लगा था सपने में जैसे माँ कह रही हों, मेरा बीली तब बड़ा होगा जब मैं मर जाऊँगी...

दो दिन बाद मैं जरा होश में आया था और बड़ी हिम्मत करके अपने मुहल्ले लौटा था। वहाँ आकर लोगों से सुना था, माइक उसी रात मर गया था और शैरोन अपने इस किराये के मकान को छोड़कर बच्चों के साथ कहीं चली गई थी।

सुनकर मै चुप खड़ा रह गया था। मेरे अंदर जैसे सब कुछ शून्य और भोंथरा हो गया था। मै कुछ सोच समझ नहीं पा रहा था। एक बार फिर शैरोन अनाथ हो गई थी, एक बार फिर मेरी माँ मर गई थीं। उस किराये के खाली मकान में फिर से भूतों का बसेरा हो गया था और मैं अपने प्यार के साथ हमेशा की तरह अकेला रह गया था, क्योंकि मैं आज भी बड़ा नहीं हो पाया था - माँ का बीली बड़ा नहीं हो पाया था। अपनी ही कैद में रह गया था वही छोटा-सा बच्चा बनकर!... उसे बड़ा होने में आज भी बहुत डर लगता है...

X

https://www.hindiadda.com/apani-kaid/